R. S.

ओ३म् पूर्णमदः पूर्णमिदं: पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते॥

❋ मनुष्य बनो ❋

अगस्त १९८०

वर्ष ३० | श्रावण सं० २०३७ वि० अगस्त, १९८० | संख्या ११

गुरु भक्ति

भक्ति का प्याला मुँह से लगा, सुध तन मन धन की भूल गई।
आनन्द मिला मतवाली बनी, सुख पाकर हर्ष से फूल गई॥

आँखों की पुतली का पाट बना, पलकों की चिक को नीचे गिरा।
पिया प्यारे को प्यार से अंग लगा, अब प्रेम हिंडोले भूल गई॥

यह प्रेम महा सुखदाई है, यह प्रेम ही सच्चा सहाई है।
जिसने लौ गुरु से लगाई है, उसकी बिपता और सूल गई॥

जो अपने पिया को मनाती है, वह प्रेम का गाना गाती है।
हँसती है और मुसकाती है, माया बैरन निर्मूल गई॥

राधास्वामी दया से दर्शन दो, मुझको भक्ति का अब धन दो।
तब कहेगी वह संसारी चाह, कारन और सूक्ष्म अस्थूल गई॥

—०—

सत्गुरु की आज्ञा के अनुसार दर्द दिल से

फकीर की आवाज

१८-७-८०

दाता दयाल महर्षि शिवब्रतलाल जी महाराज ने ये सत्संग और नाम दान का काम मुझको दिया था। मेरे इन्कार करने पर उन्होंने कहा था, फकीर ! तू अभी मंजिल पर नहीं पहुँचा। मेरी आज्ञा मान ये काम तुझको जिस गर्ज के लिये प्रकृति ने तुमको मेरे साथ लगाया है वो गर्ज पूरी करेगा।

आज और कल यहाँ सुखमनी साहिब की पहली और दूसरी अष्टपदी का पाठ हुआ। पहली अष्टपदी में प्रभु के सुमिरन से ये लाभ हो जायेगा वो हो जायेगा, यह बताया गया है मगर आखरी कड़ी में शर्त ये रखी है कि प्रभु का सुमिरन साध के संग होना चाहिए। इस समय दुनिया में आमतोर पर जो सन्तमत के अनुयाई हैं उन्होंने इसका मतलब किसी साधु के साथ बैठकर कीर्तन करना, खरताल बजाना और शब्द गाना ही समझा हुआ है। हिन्दू और तरीके से करते हैं सिख और तरीके से करते हैं और मुसलमान और तरीके से करते हैं। दर असल साध के संग का अर्थ साधु के सत्संग से समझ लेकर उसके अनुसार सुमिरन करने से हैं। दूसरी अष्टपदी से पता चलता है कि प्रभु के सुमिरन से ये मिलता है मगर साथ ही आखरी कड़ी में कहते हैं कि प्रभु है क्या, कहाँ रहता है ? वे कहते हैं कि 'प्रभु जी बसें साध की रसना'। रसना का अर्थ जवान से है। यदि इसका अर्थ जबान लिया जावे तो जवान में तो खून रहता है। खून तो प्रभु नहीं है। इसका अर्थ यह है कि सच्चे साधु के जो वचन हैं, वो जो कहता है आज्ञा देता है, किसी व्यक्ति को जो उपाय व तरीका बताता है, उसका जो अनुभव है वह प्रभु है। जो उसकी आज्ञा का पालन करता है वह अपनी मंजिल को प्राप्त कर सकता है।

अब प्रसन्न ये है कि वो साधु कैसा होना चाहिये। कौन हो सकता है ? जिस तरह एक डाक्टर शरीर की जानकारी रखता हुआ हर व्यक्ति की बीमारी का इलाज करता है। उसका इलाज किसी विशेष जाती या सम्प्रदाय के लिए

नहीं होता बल्कि सारी मानव जाति के लिये है। इस तरह से सच्चा सा मत का जानकार होता है और मन पर काबू रखता है वह मन के सारे खेल को जानता है। और जो कुछ वो किसी को कहता है वह उसके मन और अवस्था के अनुसार अपनी राय देता है। दूसरे अर्थ में मन्त्र देता है। उस पर अमल करना, उसके बताये हुये तरीके पर चलना ही प्रभु का सुमिरण है। गुरु मन्त्र है क्या ? गुरु मन्त्र केवल राम-राम जपना ही नहीं है। बल्कि 'गुरु वाक्यं मूल मंत्रम्" जो गुरु ने तुमको आज्ञा दी है उसकी आज्ञा का पालन करना ही गुरु मन्त्र है। ऐसे साधू जो होते हैं वे किसी मजहब या पंथ के नहीं होते। वो इन्सानों की दिली हालत को देखकर सब मनुष्यों के लिये आज्ञा देते हैं, और राह देते हैं। इसलिये आज्ञा है।

गुरु जो कहे सो हित कर मान,
गुरु जो कहें चित धर ध्यान।

आजकल हर धर्म के अपने २ अलग सन्त हैं। सन्त कोई पन्थ नहीं चलाता, कोई धर्म नहीं बनाता। कबीर साहिब ने कोई पन्थ नहीं चलाया। राधास्वामी दयाल ने कोई पन्थ नहीं चलाया। पन्थ के चलाने वाले गुरुमुख होते हैं। कबीर पंथ को चलाने वाले धर्मदास थे। हजूर महाराज राय सालिग राम साहिब और बाबा जयमल सिंह जी स्वामी जी के गुरुमुख थे। उन्होंने राधास्वामी मत चलाया, और पन्थ बना दिया। मैं खुश हूँ कि मेरा जो कुछ अनुभव था वह सोलह आने ठीक निकला। वही सुखमनी साहिब दोनों अष्टपदियाँ कहती हैं कि जिनके भाग्य में होता है उनको किसी सच्चे साधु, महात्मा या गुरु का संग मिलता है और यही बात अष्टपदी में आगे आई है। इसलिये मैंने 'इन्सान बनो' की आवाज उठाई है। इन्सान बनना किसे कहते हैं।

गुरु पशु, त्रिया पशु, नर पशु वेद पशु संसार।
मानुष ताहि जानिये जामें विवेक विचार।

अपील

प्रिय पाठक-गण,

राधास्वामी ।

माह अगस्त १९८० का अंक आपके हाथों में है । हमें आपसे निवेदन करना है कि यह अंक इस वर्ष का ग्यारहवा अंक है लेकिन अभी तक पचास प्रतिशत भाइयों ने अभी तक पत्रिका का वार्षिक मूल्य जो केवल सात रुपया मात्र है नहीं भेजा है । एवं बहुत से भाइयों ने तो २ से ३ बर्ष तक का चन्दा नहीं भेजा है जिसकी बजह से हमें मजबूर होकर पत्रिका बन्द कर देनी पड़ी है । और पत्रिका को गहन आर्थिक कठिनाइयों में से गुजरना पड़ रहा है । चूँकि पत्रिका केवल भाइयों के द्वारा भेजे गये वार्षिक शुल्क पर ही आधारित है । या कुछ दानी बहिन भाइयों द्वारा दान प्राप्त होता रहता है । जिनकी बजह से हम आपकी सेवा करते रहते हैं । इस समय हर चीज पर तेजी हुई हैं । और पत्रिका सकट मय दौर में गुजर रही है अतः सभी भाइयों से निवेदन है कि जिन भाइयों ने अपना वार्षिक शुल्क नहीं भेजा वह शीघ्र ही भेजने का कष्ट करे, एवं पत्रिका के लिए कम से कम दो दो ग्राहक और बनाने की कोशिश करें ताकि हम गुरु महाराज के प्रवचनों को अधिकता से लोगों में पहुंचा कर गुरु सेवा कर सकें ।

प्रकाशक एवं सम्पादक
सुधा मीतल

सूचना—अलीगढ़ शहर में कर्फ्यू के कारण हम पत्रिका आपको समय से नहीं भेज पा रहे हैं । इसके लिए क्षमा चाहते हैं ।

—प्रकाशक

धन्यवाद

१८) रु० श्री आई० पी० सक्सैना, कुदराहा, वस्ती
११) रु० श्री गुलाबचन्द जी, आजमगढ़
५) रु० श्रीफूल जी आनन्द जी, उज्जैन (म०प्र०) ने मनुष्य बनो की सहायतार्थ भेजें हैं । हम इन भाइयों के आभारी हैं कि पत्रिका के संकट काल के दौर में आपने हमें साहस प्रदान किया है । मालिक से प्रार्थना है उनकी सभी कामनायें पूरी करे ।

शेष पेज २७ पर)

प्रवचन

परम सन्त परमदयाल पं० फकीरचन्दजी महाराज मानवता मन्दिर होशियारपुर

गुरुमत क्यों बड़ा है ? लोग गुरू को केवल इन्सान समझते हैं और उनकी दृष्टि उस इन्सानरूप से ऊपर नहीं जाती। गुरु नाम समझ विवेक और ज्ञान का है।

आज रात की आपको एक घटना सुनाता हूं। रात को खाँसी आती रही और जुकाम था। फिर लगभग साढ़े चार बजे मैंने एक स्वप्न देखा। मैं एक सूर्य को देख रहा था। उसकी बड़ी रोशनी थी। अचानक धमाका हुआ जिस प्रकार बम्ब फटता है। सूर्य के टुकड़े होगये और मुझे जाग आगई। अगर किसी दूसरे आदमी को ऐसा स्वप्न आजाता तो वह चकित होता और इसके कई मतलब निकालता पागल होजाता या दूसरे संसार वालों को पूछता। पहले तो मुझे भी पता नहीं लगा। मैंने सोचा कि मैंने अपने जीवन में कभी ऐसा स्वप्न नहीं देखा। यह क्या बात थी ? सोचता रहा। क्योंकि मुझे मन के रूप का पता है कि मन क्या चीज है, मुझे तशतीस (चिन्ता) तो न हुई मगर कारण का पता न लगा कि ऐसा क्यों हुआ। फिर मैंने भूदेव को दुलाया और पूछा कि लगभग साढ़े चार वजे यहाँ कोई खड़का तो नहीं हुआ, क्या कोई चीज गिरी है ? वह कहने लगा दरवाजा बन्द नहीं होता था। मैंने उसे जोर से धक्का दिया और उसकी बड़ी आवाज हुई समझ गये, मेरे विचार बड़े सूक्ष्म हैं। मैं इस बात को मानता हूं मगर इन विचारों के बिना इन्सान इस संसार के चक्कर से नहीं निकल सकता।

वह खड़का जो हुआ वह बाहर का प्रभाव था। क्योंकि मेरी यह आदत है कि मैं रात को जागता हुआ भी जब खाली होता हूँ और समय मिलता है तो प्रकाश और शब्द का ध्यान करता रहता हूं। मैं प्रकाश में सूर्य देख रहा

था। बाहर से दरवाजे का धमाका हुआ, वह मेरे कान में पड़ा और सूर्य के टुकड़े होगये। जो रोशनी मेरे मन या आत्मा ने बनाई हुई थी वह सब टुकड़े टुकड़े होगई। हम संसार के जितने धर्म पंथ और प्राणी हैं ये सब इस मन के चक्कर में फिरते हैं। यही खण्डन, कबीर साहिब, स्वामीजी और सन्तों ने किया। उस समय मैं ब्राह्मण और हिन्दू होने के नाते इन वाणियों को नहीं समझ सकता था और रोया करता था कि ऐ भगवन ! मैं तो तुझे मिलने निकला था, मैं कहाँ फँस गया। डी. एस. पी. साहिब आप आये हैं। मैं आप लोगों को Practical Life क्रियात्मक जीवन का संत्संग कराता हूं अब जो घटना मेरे साथ हुई अगर किसी और के साथ होती तो वह चिन्ता करता और चकित होता कि सूर्य अन्तर फट गया है और धमाका हुआ है।

गुरुमत क्यों बड़ा है ? क्योंकि सारे मतमतान्तर इस मन के झगड़े में पड़े हुए हैं। कबीर साहिब कहते हैं—

मन को मारूँ पटक कर, टूक टूक हो जाय।
विष की क्यारी बोयकर, लुनता क्यों पछताय ॥

वह कहते हैं कि इस मन को मैं मारदूँ, पटक दूँ और फैंक दूँ। क्योंकि जहर की क्यारी बीज कर जब उसका फल चखूँगा तो मुझे पछताना पड़ेगा। यह मन ही हमारे सारे सुखों और दुखों का जिम्मेवार है। दाता फरमाया करते थे कि जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी मति वैसी गति जैसी करनी वैसी भरनी। मैं गुरुमत का क्यों हामी हुआ ? यह मामूली बात नहीं है। मैं जिस परिवार में पैदा हुआ वहां ईश्वर परमेश्वर ब्रह्म, परब्रह्म सब इनकी पूजा करने का दस्तूर था और मैं कहाँ फँसा जहाँ इनका खण्डन था। दातादयाल जिनको मैं राम का अवतार समझता था उन्होंने मेरे नाम पत्र लिखा हैं। वह भी लिखते हैं——

मैं नहीं राम कृष्ण का सेवक ईस ब्रह्म नहीं जानूँ
मैं फकीर का नाम दिवाना सब से बढ़कर मानूँ
जो फकीर मोहि दर्शन देवे, अपना भाग्य सराहूँ
अपने तन की चाम की जूती पग फकीर पहनाऊँ

वह कितने Learned आदमी थे। वह वेद पुराणों को जानते थ। उन्होंने पाँच हजार किताबें लिखीं और वह लिखते हैं कि मैं ईश्वर, परमेश्वर ब्रह्म का सेवक नहीं हूँ मैं केवल फकीर अर्थात गुरू, साधू तथा सन्त का सेवक हूँ। उस समय यह बात मेरी समझ में नहीं आतीं थी। अब मैं समझता हूँ कि जो कुछ उन्होंने लिखा वह ठीक है। वह समझ मुझे किस प्रकार आई ? कुछ समझ तो सत्संगियों के अनुभवों से आई कि जो कुछ किसी के अन्तर प्रकट होता है वह बाहर के प्रभाव अर्थात Suggetion & Impression होते हैं, जो तुम्हारे मस्तिष्क पर पड़ते हैं जैसे बाहर के धमाके का प्रभाव मेरे मस्तिष्क पर पड़ा। अगर मैं अज्ञानी होता तो इसके कई अर्थ लेता। इस वास्ते सन्तों ने गुरू का दर्जा ईश्वर, परमेश्नर, परमात्मा, ब्रह्म, पारब्रह्म सब से बड़ा रखा है और अब मेरी बुद्धि मानती है और निश्चय होगया है कि जो कुछ इन सन्तों ने कहा है वह सोलह आने सच है। सन्तों ने सबका खण्डन तो कर दिया मगर हम लोगों को उसका कारण नहीं बताया। देखो ! कबीर साहिब ने कहा है--

साधो यह मन है बड़ा जालिम
जा को मन से काम परो है, तिस ही हवै है मालुम
मन कारन जो उनको छाया, तेहि छाया में अटके।

वह कहते हैं यह मन बहुत जालम हैं। जो दोनों निर्गुण और सरगुण की उपासना करने वाले हैं, ये किस की उपासना करते हैं ? क्या परमात्मा की उपासना करते हैं ? नहीं, ये अपने मन की ही उपासना करते हैं। एक आदमी कहता है कि परमात्मा निराकार है, उसका कोई रूप नहीं, दूसरा साकार कहता है। जो परमात्मा को निराकार मानता है वह भी उसका मन है और जो साकार मानता है वह भी उसका मन मानता है। अगर वह साकार की पूजा करता है तब भी अपने मन की पूजा करता है अगर वह निराकार मानता है तब भी अपने मन की पूजा करता है।

आप लोग सत्संग के लिए आये हैं। मैं जानता हूं कि आप लोग मेरी इस शिक्षा के अधिकारी नहीं हैं। बुरा न मानना मैं बड़ा साफ आदमी हूँ।

आप लोगों को इस शिक्षा की आवश्यकता नहीं है । एक दिन पहले एक आदमी मेरे पास आया । वह क्यों आया ? क्योंकि उसके सन्तान नहीं थी । क्या बच्चा फकीरचन्द ने देना है ? उसे युक्ति बता दी कि इस प्रकार से बच्चा पैदा होगा जैसी मेरी बुद्धि थी । इसलिए गुरु का दर्जा ईश्वर, परमेश्वर ब्रह्म, पारब्रह्म, संत अलख, अगम और अनामी से अधिक है क्योंकि गुरु तो तुम्हारा Self अपनी जात है । जब मैं यह बात कहता हूं तो अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि अगर तू गलत से गुरुमत की मान प्रतिष्ठा बढ़ायेगा या इसकी पुष्टि करेगा तो कुष्ठी होकर मरेगा । गुरु हो तो सभी मानते हैं मगर सन्त सब कुछ ही गुरु पर छोड़ते हैं । वे किसी ईश्वर, परमेश्वर, ब्रह्म, पारब्रह्म को नहीं मानते और यही कारण है कि लोग सन्तों को गालियें निकालते हैं । एक बड़े अच्छे पण्डित यहाँ आया करते हैं उन्होंने भी वह दिया था कि कबीर क्या जानता है । वे लोग क्यों कहते हैं ? क्योंकि उन्होंने खण्डन कारण नहीं बताया ।

इसका क्या भाव है ? कि तुम्हारा मन ही इस जीवन का सब कुछ करने वाला है । जब तक कोई आदमी इस मन के चक्कर से नहीं निकलेगा वह लाख शब्द अभ्यास करे, लाख सन्यास ले और लाख दान पुन्य करे, जो इच्छा करे वह इस चक्कर से निकल सकता । इस वास्ते कहते हैं कि ज्ञान के बिना मोक्ष नहीं । ज्ञान क्या है ? ज्ञान देने वाला गुरु होता है ।

बाणी गुरु गुरु है वाणी, वानी अमृत सारे ।

हर आदमी गुरु बनने के योग्य नहीं है । (ज्ञान क्या है ?) मन के चक्कर से निकल जाना या अपने आपको जानना । यह सारा झगड़ा तुम्हारे मन का है । जब तक कोई आदमी मन से बाहर नहीं निकलता या मन के असली रूप को नहीं पकड़ता वह कभी भी दुखों और सुखों से नहीं बच सकता और मोक्ष को प्राप्त नहीं हो सकता । कितने दुखी आदमी मेरे पास आते हैं । कोई रोता, कोई हँसता, किसी को कोई दुख, किसी को कोई दुख है । ये सब मन के ही चक्कर में है और कुछ भी नहीं है । इस मन को समझना है । अगर कोई मन को समझ जाये तो जो पिछले कर्म किये हुए हैं वे तो भोगने पड़ेगे मगर वह

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

उन्हें Mind नहीं करेगा।

मन कारन जो उनको छाया, ते ही छाया में अटके।
निरगुन सरगुन मन की बाजी, खरे सयाने भटके ॥

कबीर साहिब कहते हैं कि ये सब मन की छाया में भटक गये। जिस प्रकार आज किसी के अन्तर बाबा फकीर प्रकट हो गया। उसने समझा कि फकीरचन्द होशियारपुर से आया है और वह मुझे गुरु मानकर पूजने लगा तो क्या वह भटका या नहीं भटका ? वह भटक गया क्योंकि मैं तो उसके अन्तर नहीं गया, न ही मुझे पता है। यह जितना झगड़ा है सब तुम्हारे मन का है। इन मन के रूप से वह बच सकता है जिसे किसी पूर्ण गुरू की संगत मिली हुई हो। उसे गुरु के वचनो से ज्ञान होता है तब वह बच सकता है। हमारे जितने झगड़े धर्म के हैं ये सब के सब माया और जाल हैं और कुछ नहीं —

मन ही चौदह लोक बनाया, पाँच तत्व गुन कीन्हे।
तीन लोक जीवन बस कीने परै न काहू चिन्हे ॥

मन एक ऐसी चीज है जिसने सारे संसार को बनाया है। अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि क्या तू जानता है कि मन क्या चीज है ? मन किसी को दिखाई नही देता। क्यों ? जो कुछ भी हमारे अन्तर कुरना फुरती है उससे मस्तिष्क के Cells खुलते हैं। जब प्रकाश रूपी आत्मा हमारे अन्तर आता है तो वह मस्तिष्क के Cells में से शरीर में आता जाता रहता है। जूं जूं (ज्यों २) बढ़ता जाता है तूं तूं त्यों त्यों उसमें (Devlopment of Senses) बढ़ता रहता है और मन चित, बुद्धि, अहंकार पैदा होते रहते हैं मगर उसका अपना कोई रूप नहीं। वे बाहर के प्रभाव हैं, कुछ अपनी प्रकृति और कुछ बाहर से सुनी हुई बातें। हम जितनी भी बातें करते हैं यह सब बाहर प्रभावों का प्रभाव है। राधास्वामी मत ने अपना 'सार वचन हिदायत नामा' लिखा, गुरु नानक साहिब ने जो कुछ कहा, इन सबके मस्तिष्क के ऊपर कबीर साहिब के शब्दों का प्रभाव था, वे घर से नहीं लाये। मन वह चीज है जो आपको दिखाई नहीं देगा। यह पैदा होता रहता है, संस्कार हैं, जैसे जैसे प्रभाव बाहर से मिलते हैं। जब तक कोई आदमी

इन संस्कारों के रूप को नहीं जानता उसके ऊपर हर प्रकार का प्रभाव हो सकता है। हिपनोटिज्म व मिस्मरेजम भी उस पर प्रभाव डाल सकता है। उसे मूर्ख और बुद्धिमान भी बना सकता है, क्योंकि उसकी अपनी समझ नहीं। इस वास्ते सन्तों ने बार बार कहा है कि पूरा गुरु। गुरु नानक साहिब की बाणी पढ़ो। वहाँ भी पूरे गुरु का वर्णन आया है। हर जगह गुरु की महिमा है। मगर यह किनके लिए है ? केवल उनके लिए जो इस संसार में रहकर दुख से घबराये हुये हैं। यह सन्तमत उनके लिए नहीं हैं जो पुत्र धन उन्नति और कुछ चाहते हैं। उनके लिए अगर कोई चीज है तो यह है कि किसी सन्त के संस्कार से अपने मन के विचारों को अच्छा बनाये इसे शिव संकल्प अस्तु' कहते हैं। यह वेद मार्ग है। संसारी कामों के लिए सन्त मत का कोई Concern नहीं है। यह तो हम गुरुओं ने अपने मान प्रतिष्ठा, धन धान्य और हजारों का गुरु कहलाने के लिए जो आया उसे नाम, जो आया उसे नाम। नाम का अधिकारी कौन है ? नाम तो उसे मिलना चाहिए—

विषयों से जो होय उदासा, परमार्थ की जा मन आसा ॥
धन सन्तान प्रीत नहीं जाके, खोजत फिरे साध गुरु जाके ॥

उनके लिए यह नामदान और सन्तमत का सत्संग हैं। सर्व साधारण के लिए नहीं है। सर्वसाधारण के लिए 'शिव संकल्प अस्तु' है। इस वास्ते मैंने अपने स्थान का नाम रूहानी आश्रम, (आध्यात्मिक) सत्संग या राधास्वामी सत्संग नहीं रखा। यहाँ Beman Temple बनाया कि पहले इन्सान बनो, अपना आचार व्यवहार ठीक करो, अपने माव तथा विचारों को शक्ति शाली बनाओ। जब तक तुम्हारा मन तुम्हारे वश में नहीं है तुम इसे अपने आधीन नहीं रख सकते और न ही संसार में कोई लाभ उठा सकते हैं। जो कुछ है तुम्हारे पास है। तुम Optimistic Views रखो, आशावादी रहो। उस मालिक का कोई रूप नहीं। एक रूप मान लो। जो जिसको पूजता है उसके सब काम उसका केवल विश्वास और श्रद्धा करती है, दूसरा कोई भी कुछ नहीं कर सकता। मैं यह काम करता हूँ क्योंकि मेरे जिम्मे तीन कर्तव्य निर्बल, अबल और अज्ञानी जीवों की सहायता करना, जगत

कल्याण के लिए काम करना और जीवों को भव सागर से पार करना। अब मैं अपनी आत्मा से पूछता हूं कि क्या तू किसी को फूंक मार कर भवसागर से पार कर सकता है ? नहीं, कोई भी नहीं कर सकता। मैं वह बात कहता हूँ। अगर यह बात समझ में आ जाये तो तुम भवसागर से पार हो सकते हो। वह समझ क्या है ? यही कि इस मन के रूप को समझो। मन की चाल में मत फँसो यह मन ऐसा वैरी है कि कभी तो आदमी को किसी ढंग से मारता है, सुख को काबू (वश) करता है, कभी किसी ढंग से और कभी किसी ढंग से और कभी किसी ढंग से और हम उस चक्कर में फँसे हुये हैं। लोग चिन्तपूरनी को मत्था टेकते हैं, दयोरे सिद्ध जाते हैं और कई जगह जाते हैं और होशियारपुर आते हैं। मगर कोई सच्चाई बताता। अगर सच पूछते हो तो मेरी भी यह गलती है। संसार को सचाई की आवश्यकता नहीं। संसार तो संसार के झगड़ों में पड़ा हुआ है, सचाई कौन चाहता है। संसार वालों को संसार के आराम के लिए चीजें चाहिए। जो तुम्हारा विश्वास या कर्म होते हैं तुम्हें वह मिलता है।

आप लोग आज जा रहे हैं। मैंने अपना कर्तव्य पूरा कर दिया मैंने आप से यही वायदा किया था कि आप आ जाइये मैं आपके भ्रम दूर करने की कोशिश करूँगा। भ्रमों से निकलना तुम्हारा अपना काम है। कौन निकालेगा गुरु। कौन गुरु निकालेगा ? फकीरचन्द होशियारपुर वाला नहीं। जो फकीर चन्द होशियारपुर वाले ने तुम्हें समझ दी है। वह समझ तुम्हारी जीवन में तुम्हारी सहायता करेगा न कि फकीर चन्द तुम्हारी सहायता करेगा न कि फकीर चन्द तुम्हारी सहायता करेगा। इसी एक भ्रम में आकर हम लुट गये इन सारे धर्म वालों और महात्माओं ने ऐसा पाखण्ड का जाल बनाकर हमें लूटा है कि जिसका कोई हिसाब नहीं।

जो कोई कहे हम मन को मारा, जा के रूप न रेखा।
क्षिप्त में कितनी रग लगावे, जे सपनेह नहीं देखा॥

कबीर साहिब कहते हैं कि जो यह कहता है कि मैंने मन को मार लिया है वह गलता है। किसी ने इस मन को नहीं मारा न यह मरता है। क्योंकि

मैं यहाँ हूँ, आपका बाहर का (External effect) मुझ पर पड़ेगा, जैसी मेरी प्रकृति है वैसा मैं उस परिणाम पर पहुंच कर अपने आप में खोजूँगा। मन नहीं मारा जाता, केवल मन के रूप को समझकर उसमें न फँसना ही मन को मारना है। ये बातें केवल किताबों में लिखी हुई ह कि काम क्रोध आदि को मारो मगर किसी ने आज दिन तक नहीं मारा। कैसे मानूँ कि मन मरता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार ये जीवन के पाँच अंग हैं जिसमें काम नहीं वह तो हिजड़ा है, वह सिवाय ताली बजाने को और क्या काम करेगा, अगर क्रोध नहीं है तो जो भी उठेगा तुम्हें दबायेगा, जिसमें लोभ नहीं है वह अपना पेट नही पाल सकता। इनके विरुद्ध शिक्षा देना गलत शिक्षा देना है। जैसे अगर मन बन्द हो जाय तो जीवन नहीं रहता। इसलिए केवल मन के रूप को समझना है और जहाँ से हम आये हैं उसका इष्ट रखना है। हम प्रकाश और शब्द से आये हैं। इस वास्ते सनातन धर्म में गायत्री के मन्त्र में यही कुछ कहा गया है कि जाग्रत, स्वप्न सुसुप्ति से परे जो सूर्य है उसका ध्यान करो। वह बुद्धि का प्रेरक होगा और राधास्वामी मत वाले संत भी यही कहते हैं कि सहस्र–दल, कँवल, त्रिकुटि, सुन्न, महासुन्न, भँवर गुफा और सतलोक से आगे अलख, अगम और अनामी में जाओ। कोई अन्तर नहीं है। केवल बात यह है कि हम अमल नहीं हैं। और जो कुछ हम किसी को कहते हैं किताबों का हवाला देते हैं। मैं दूसरों की किताबों का हवाला नहीं देता क्योंकि दाता ने जब मुझे नाम दिया था तो कहा था फकीर !

जब तक न देखो अपने नैना।
कभी न मानना मेरे बैना ॥

फकीर ! जब तक तुम आप किसी चीज को न देखो तो मेरी बात पर विश्वास न करना। दाता ने मुझ पर दया कर दी, यह गुरु पदवी दे दी। इस गुरु पदवी पर आने से जो मैंने सीखा है यह तुम लोगों से सीखा है। आप लोग इस ज्ञान के देने वाले हैं। केवल इस एक विचार से कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता मेरे जीवन का तख्ता ही बदल गया और मैं शिक्षा को बदल सका।

रसातल इक इस ब्रह्मण्डा, सब पर अदल चलावै ।
षटरस में भोगी मन राजा, सो कैसे कै पावै ॥

अपने आपसे पूछता हूँ कि तू बता तूने मन को क्या समझा यह मन कैसे पैदा होता है ? जब प्रकाश रूपी आत्मा इन्सान के अन्तर इस स्थूल शरीर में आता है तो खून के रास्ते वह प्रकाश हर समय शरीर में दौरा करता रहता है ज्यों २ उसकी आयु अधिक होती जाती है तो मस्तिष्क के Cells खुलते जाते हैं । अगर कोई छोटा बच्चा जिसकी आयु दो चार दिन हो, उसका आपरेशन करना हो तो उसे कुछ सुंघाया नहीं जाता क्योंकि उसकी खून की गति न होने से उसमें बहुत ही कम बोधमान होते हैं । सब खेल उसी (Superem Power) का है । जब वह नीचे आती है चाहे इस ब्रह्मन्ड में आये, चाहें अनेकों ब्रह्मन्डों में आये तो वहाँ उसके अन्तर एक सनसनाहट पैदा होती है जिस प्रकार सोड़ा और टाटरी मिला देने से शूँ शूँ होती है । इसी प्रकार उस प्रकाश के किसी स्थूल चीज में अपने से एक प्रकार की सैंसेशन पैदा होती है । वह सैंसेशन जब बिल्कुल कारण अवस्था में होती है तो उसका नाम सुरत है । जब वह नीचे आ जाती है तो उसका नाम आत्मा बन जाता है । वही सैंसेशन जब और नीचे आ जाती है तो उसे हम मन कह देते हैं । वही सैंसेशन जब शरीर में आजाती है तो हम उसे जीव कह देते हैं । ज्यों ज्यों वह नीचे आती है उस पर माया का खोल या गिलाफ चढ़ता जाता है जिसका आखरी रूप यह हमारा शरीर है–

सब के ऊपर नाम निछावर, तहँ लै मन को राखै ॥
तब मन की गति जान परै यह, सत कबीर मुख भाखै ॥

इस मन से बचने का उपाय, ढंग है क्या है ? शारीरिक बोधमान । अक्षर क्या है ? मानसिक विचार, मन से परे की अवस्था अर्थात प्रकाश और शब्द । कबीर साहिब कहते हैं कि जब तक मानव मन से परे नहीं जाता वह उसके रूप को नहीं समझ सकता । मैं ऊँचे से ऊँचा अभ्यास करता था मगर नहीं निकल सकता था । जब दाता के पास जाता था तो वह कहते थे कि अभी तू काल माया से नहीं निकला । मैं पूछता था कि मैं कैसे निकलूँगा ?

उन्होंने कहा तुम मेरी आज्ञा मानते चलो । यह काम मुझे मेरे कल्याण के लिए दिया था। जब से मुझे पता लगा कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता और यही एक परदा था जिसमें आकर Huminity भिन्न २ धर्मों में बँट गई और हम आपस में लड़ते हैं। मैंने इस समय इस शिक्षा की आवश्यकता महसूस की इसलिए मैंने सचाई का वर्णन कर दिया।

ये मौजूदा महात्मा जो गुरु बने हुये हैं या जो आने वाले महात्मा हैं वे अपने निजी स्वार्थ, मान प्रतिष्ठा को छोड़कर सचाई से अपने जीवन का अनुभव पब्लिक के सामने वर्णन करें। यह झगड़ा तब समाप्त होगा वरना नहीं। क्योंकि जिस आदमी ने गद्दी बनाई है और गुरु बना हुआ है वह ऐसी बात कब कहेगा क्योंकि ऐसा कहने से धन नहीं आयेगा और मान प्रतिष्ठा नहीं होगी जैसे मैं कहता हूं कि मैं किसी के अन्तर नहीं जाता। मैं स्वयं चकित हूं कि मेरा इतना स्पष्ट वर्णन होते हुए भी दाता यहाँ कैसे प्रबन्ध कर रहा है। यहाँ पब्लिक सहायता करती है। Free Publication है, यह उसकी मौज है। मैं कहता हूँ :—

I am the incoronation of truth and reality and I have come in this physical form of Faqir Chand to disclose the secrets of sprituality and mind.

ताकि जो इस संसार की लूट से बचना चाहें वे बच जायें। हमें लूट ने इतना मारा है जिसका कोई अन्त नहीं। गुरू की क्या सेवा है ? यह जो तुम इस समय कर रहे हो। अगर रुपया देने से किसी को मुक्ति मिल जाती तो ये बड़े–२ धनी लोग शान्ति प्राप्त कर लेते। गुरु सेवा है, गुरु की बात को सुनना और उस पर अमल करना। मन के झगड़ों से वह बच सकता है जिसे गुरु से ज्ञान हो गया है। उसकी बात को समझकर मन के चक्कर से निकलो अपना इष्ट प्रकाश और शब्द रखो, फकीरचन्द नहीं नाम क्या है ? मन से परे चले जाना। जब तक इन्सान मन से परे नहीं जाता, उसकी समझ में मन नहीं आता।

मैं जन्म बनाना चाहता था कि मैं फिर वापिस न आऊँ और मुझे

असलियत का पता लग जाये। प्रकृति मुझे सन्त मत में ले आई। उन्हान नाम दान दिया और सतसंग कराया, यह कराया और वह कराया। मैंने सब कुछ किया। केवल अपने मन को उसमें ठहराने का यत्न करो। जब वह अच्छी प्रकार ठहर जाये समाधि लग जाये, योग से चित्त की वृत्ति निरोध को प्राप्त हो जाये अर्थात अपने अन्तर शान्त हो जाये तब उसे ज्ञान मिलता है और इस सन्त मत से असली लाभ प्राप्त होता है।

इस वास्ते सन्त जान बूझकर इस ऊँची शिक्षा को परदे में रखकर पहले सुमिरन, ध्यान, भजन बताते हैं। इससे जब चित्त की वृत्ति शान्त हो जाती है या उनमें से कोई लायक निकलता है तो उसे वह आगे का मार्ग बताते हैं। यह बात मैंने समझी है।

सबको राधास्वामी !

— ॥ —

सन्त वाणी से—

पीर सबन की एक सी

क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपना जाया,
सब का लोहू एक है, साहिब फरमाया।
पीर पैगम्बर औलिया सब मरने आया,
नाहक जीव न मारिये पोषन को काया।

[नानक

अर्थ—रक्त-मांस सबका एक सा ही है। यह हमारा नहीं खुद सृष्टा का कथन है, बकरी हो या गाय, या अपनी सन्तान ही क्यों न हो, रक्त मांस तो सबका एक ही है। पीर और पैगम्बर और औलिये सब मरने को ही यहाँ आये हैं, फिर इस देह का पीषण करने के लिए, जो खुद मर्त्य हैं, क्षण जीवी हैं, क्यों किसी प्राणी का व्यर्थ वध किया जाये ?

काला मुँह कर करद का, दिल से दूरि निवार,
सब सूरत सुबहान की, मुल्ला मुग्ध न मार ।

[दादूदयाल

आपन को मारे नहीं, पर को मारन जाइ,
'दादू आपा मारे बिना, कैसे मिलै खुदाइ ।

अर्थ— मुल्ला, कालिख पोत दे इस खूनी छुरी पर, दिल से निकाल दे ज़िबह करने का काला खयाल । ये सारी सलोनी सूरतें अल्लाह की तो हैं— मुल्ला, क्यों गरीब प्राणियों को ज़िबह कर रहा है ?

मूर्ख अपनी खुदी का तो खून करता नहीं, दूसरों का वध करने चला है । बगैर खुदी को ज़िबह किये भला खुदा कभी मिल सकता है ?

पीर सबन की एक सी, मूरख जानत नाहिं ।
काँटा चूभै पीर है, गला काटि को खाहिं ।।

[मलूकदास

मूर्ख तू समझता नहीं ? पीर तो सबको एक सी ही होती है, पाँव में तें कभी काँटा चुभा है, पीड़ा कभी हुई है ? फिर भी तू गरीब प्राणियों के गर्दन पर छुरी चलाता है ।

कुंजर चींटी पसू नर, सबका साहिब एक ।
काटै गला खुदाय का, करै सूरमा लेख ।।

[मलूकदास

हाथी में, चींटी में, पशु में और मनुष्य में, सब में एक ही आत्मा है, एक ही परमात्मा है । खुदा के गले पर छुरी फेरता है, और तिस पर शूरमाओं में अपनी गिनती कराता है ।

सब में एक खुदा ही कहत हो,
तो क्यों मुरगी मारो ?

[कबीर

अगर कहते हो कि सबके अन्दर एक ही खुदा हैं तो फिर इस गरीब मुरगी को क्यों ज़िबह करते हो ?

जिव मति मारो बापुरा, सबका एकै प्रान,
हत्या कबहुँ न छूटिहै, कोटिन सुने पुरान।
तिलभरि मच्छी खाइकै, कोटि गऊ करि दान,
कासी करवट लै मरै, तो भी नरक निदान।
पढ़कै शास्त्र जीव–बध करई,
मूँड़ि काटि अगमन के धरई।
खुस खाना है खीचड़ी, पड़ा हुआ टुक नौन,
माँस पराया खाइकै, गला कटावै कौन।

अर्थ—क्यों मारते हो किसी गरीब जीव को, जान जब सब की एक-सी ही है? भले ही तुम करोड़ों बार वेद–पुराण सुनो, जीव–हत्या के पाश से मुक्त होने के नहीं।

माना कि तूने करोड़ों गायों का दान किया है, और काशी में 'करवत' र मरने का भी तेरा संकल्प है, पर तू नरक–वास से बचने वाला नहीं।

तूने मछली का माँस रत्तीभर ही खाया है, पर दण्ड तो तुझे पूरा ही गना पड़ेगा।

शास्त्र पढ़-पढ़कर तू जीवों का वध करता है! पशुओं के सिर काट-काट-र निर्जीव मूर्तियों के आगे चढ़ाता है!

खाना तो संतोष का खीचड़ी का है—जिसमें, बस, जरा सा नमक पड़ा दूसरों का माँस खा–खाकर, कयामत के दिन भला कौन अपना गला कटायेगा?

जब मांस पसु का तस मांस नर का,
रुधिर – रुधिर इकसारा।
पसु का मांस भखै सब कोई,
नरहि न भखै सियारा।
ब्रह्म कुलाल मेदिनी भइया,
उपजि विनसि कित गइया,
मांस–मछरिया तौपै खइये,

जौ खेतन में बोइया।
माटी के करि देवी–देवा,
कटि–कटि जिव देइया,
जो तुहरा है साँचा देवा,
खेत चरत क्यों न लेइया!
कहत कबीर, सुनहु हो सन्तो,
राम नाम निज लेइया।
जो किछु कियहु जीव के स्वारथ,
बदल पराया देइया।

[कबीर

हिन्दू की दया, मेहर तुरकन की,
दूनों घट सों त्यागी।
वै हलाल, वै झटका मारैं,
आग दूनों घर लागी।

[कबी

अर्थ— रक्त–मांस तो सब का एक सार ही है, जैसा पशु का मांस, वैसा ही मनुष्य का मांस। किन्तु मनुष्य का मांस तो चाव से सियार भी नहीं खाते ऐसा निरुपयोगी है नर का मांस। उसके पोषण के लिए पशुओं का माँस खाते हैं, रसना के दास ये मूढ़ मानव! उस कुशल कुंभकार ने पृथिवी पर असंख्य घटों को सरजा, क्यों न उत्पत्ति के साथ ही उनका विनाश हो गया? मांस-मछली तुम्हारे खेत की उपज है क्या? तब अवश्य तुम अपना बोया धान्य काटकर खा सकते हो। तुमने मिट्टी की देवी बनाई, और मिट्टी का देव– और लगे उन्हें सच्चे जीवों की बलि देने! तुम्हारे बनाये देवी-देवता सत्य हैं, तो वे खेत में चरते पशुओं को खुद पकड़कर खा जाये। राम का भजन करो, जीभ की गुलामी छोड़ो। उस दिन की भी कुछ खबर है तुम्हें? वहां गरदन के बदले गरदन देनी पड़ेगी। [हिंसा जननी है, प्रतिहिंसा उसकी पुत्री।]

हिन्दू ने दया छोड़ दी, मुसलमान ने मेहर, दोनों ही घट आज खाली पड़े हैं ! पशु हत्या को एक कहता है 'हलाल' और दूसरा 'झटका'– मगर आग तो दोनों ही खूनियों के घरों में लगी है !

बरबस आनिकै गाय पछारी—
गला काटि जिव आप लिया ।
जीयत ही मुरदा करि डारा,
तिसको कहत 'हलाल हुआ !
जाहि मांस को पाक कहत हो,
ताकी उतपति सुनु भाई !
रज-वीरज सों मांस उपाना,
मांस नपाकी तुम खाई ।
अपनी देखि करत नहिं अहमक,
कहत, 'हमारे बड़न किया ।'
उसका खून तुम्हारी गरदन,
जिन तुमको उपदेश दिया ।

[कबीर

अर्थ –अहमक, तेरी नादानी का कुछ पार ! गाय को बरबस पकड़ कर दिया, और उसकी गरदन पर छुरी फेर दी, और फिर जीवित को मृतक करके कहता है – 'अब यह हलाल हुआ !' जिस मांस को तू पाक कहता है, उसकी उत्पत्ति भी जानता है ? रज–वीर्य से उत्पन्न अपवित्र मांस है वह ! नादान, नापाक चीज को पाक बता रहा है ! कहता क्या है–'हमारे बुजुर्गों ने यह चलाया है। जिसने तुझे मांस भक्षण का उपदेश दिया उसका भी एक दिन खून होगा – और तेरी मोटी गरदन पर तो छुरी चलेगी ही ।

मक्का मदिना द्वारका, बद्री औ केदार,
बिना दया सब झूँठ है, कहै मलूक विचार ।

[मलूक ईस

अर्थ—तेरा दिल दया से अगर खाली है, तो—तेरा मक्का भी झूठा, और तेरा मदीना भी झूठा, और तेरा बदरी-केदार जाना भी बेकार।

माँस-माँस सब एक है, मुरगी हिरनी गाय,
आँख देखि जे खात है, ते नर नरकहिं जायँ।
मुरगी मुल्ला से कहै, जिबह करत है मोहिं,
साहिब लेखा माँगसी, संकट परिहै तोहिं।

[कबीर

अर्थ—मांस तो सबका एक-सा ही है—चाहे वह मुरगी का हो, चाहे हिरनी का, चाहे गाय का, मांस-भक्षी को अवश्य एक दिन नरक-यात्रा करनी पड़ेगी।

मुल्ला, भुझ गरीब मुर्गी को तू आज भले ही ज़िबह करे, मगर उस दिन की भी तुझे कुछ खबर है ? मालिक जब कर्मों का हिसाब माँगेगा, तू आफत में पड़ जायेगा।

हिन्दू के दाया नहीं, मेहर तुरक के नाहिं,
कह 'कबीर' दोनों गये, लख चौरासी माहिं।
रोजा तुरक नमाज गुजारै, बिसमिल बाँग पुकारै,
उनकी भिस्त कहाँ ते होइहै, साझै मुरगी मारै।

[कबी

ऐसा मुरसिद कबहुं न करिये,
खून करावै तिसतें डरिये।

[मलूकदास

जिन्ह जस माँसू भखा पराया,
तस तिन्हकर लेइ औरन खाया।

[जायसी

दया भाव हृदय नहीं, ज्ञान कथै बेहद,
ते नर नरकहिं जाहिंगे, सुनि-सुनि साखी शब्द।

[कबीर

लै फ़रमान दिवान का खसि प्यादे जे खाहिं,
बाँहीं बद्धे मरियहि, मारें दे कुरलाहिं।

अर्थ—दया हिन्दू के हृदय में नहीं, मेहर मुसलमान के दिल में नहीं, तब तो इन दोनों को ही चौरासी लाख योनियों की सैर करनी पड़ेगो !

रोजा भी रखते हैं, नमाज भी पढ़ते हैं। जोर-जोर से अजान भी लगाते हैं। और शाम होते ही मुरगी ज़िबह करते हैं ! ऐसों को स्वर्ग भला कभी नसीब हो सकता है ?

न, ऐसे को कभी मार्ग-दर्शक न बनाओ, उससे बाबा दूर ही रहो—जो जीव-हत्या की तरफ तुम्हें प्रेरित करता है।

जिन्होंने पराये मांस का भक्षण किया, उनका मांस आज दूसरे चींथ-चींथ कर खा रहे हैं।

साखियाँ और शब्द सुन-सुनकर भी वे मनुष्य नरक जायेंगे, जिनका हृदय दया भाव से सूना है। क्या होता है ज्ञान का निरूपण करने से ?

दीवान के हुक्म से ये प्यादे, बकरे मार-मार कर खा रहे हैं। ऐसों की मुश्कें बाँधी जायेंगी. और ऊपर से यमदूतों की मार पड़ेगी, उस दिन ये जालिम जोर-जोर से चिल्लायेंगे।

जिन पर-आतम चीन्हिया, ते ही उतरे पार।

[मलूकदास

जे दुखिया संसार में, खोवो तिनका दुक्ख,
दलिहर सौंप मलूक को, लोगन दीजे सुक्ख।

[मलूकदास

काहे को दुख दीजिए, घट-घठ आतमराम,
'दादू' सब सन्तोषिये, यह साधू का काम।
काहे को दुख दीजिए, साईं है सब माहिं,
'दादू' एकै आत्मा, दूजा कोई नाहिं।

[दादूदयाल

ज्यों आपै देखै आपको, यों जे दूसर होइ,
तो 'दादू' दूसर नहीं, दुख न पावै कोइ।

[दादूदयाल

अर्थ—जिन्होंने दूसरों की आत्मा को पहचान लिया,
समझ लो, वे संसार–समुद्र से पार उतर गये।

दुनिया में जो भी प्राणी दुखी मिले, उनका दुख दूर कर दो। दुनियाभर की दरिद्रता, लाओ, मुझे सौंप दो, और सारा सुख जगत में बाँट दो।

जब सर्वत्र सब में तेरी ही आत्मा समाई हुई है, तेरा ही राम हर घट में बस रहा है, तब अपनी ही तरह सबको सन्तोष ही देना चाहिए। साधुजनों का कर्तव्य ही यही है।

तेरा प्यारा प्रभु ही सब में रम रहा है, तो फिर क्यों किसी को दुःख देता है ? सब प्राणियों के अन्दर एक ही आत्मा का वास है, दूसरा तो जगत में कोई है ही नहीं।

जिस आँख से मनुष्य अपने आपको देखता है, उसी आँख से यदि वह दूसरों को देखने लगे, तो दूसरा कोई दृष्टि में आयेगा ही नहीं, और न कोई किसी को दुःख देगा।

+=+

गतांक से आगे—

शिव संहिता

भूत बेताल

प्रकट रूप था वैसे तो पारवती जी दयावान थीं। इस समय जब ब्रह्मा, विष्णु ने देखा कि शिवजी की अबस्था शोचनीय है तो वह आये और पारवती जी की स्तुति करने लगे। शिवजी भी एक ओर खिसक गये। लड़के का सर तो पैरों से कुचला जा चुका था। शिवजी ने अपने गणों को इशारा किया कि किसी हाल के पैदा हुए बालक का सिर लाकर उसके धड़ पर लगादो ! यह

गये और पहले जो हाथी का बच्चा उनके सामने आया उसी का सर काटकर ले आये और शिवजी ने उसे धड़ पर लगा दिया। ब्रह्मा और विष्णु ने कहा 'माई! तेरा लड़का जी पड़ा! अब शिव भगवान को क्षमा कर।' पारवती ने देखते ही उसे गोद से चुपटा लिया और इस प्रकार उनका झगड़ा मिट गया।

अब पारवती जी को यह भ्रम रह रह कर सताने लगा कि क्यों तो शिव भगवान ने लड़के के हाथी का मुँह लगाया, क्यों सिंदूर इस भारी भड़कम शरीर पर मला, क्यों चूहे की सवारी दी और क्यों इस रहस्य को शिवजी टालमटूल करते हैं? न रहा गया, एक दिन अड़ गई। त्रियाहट सब जानते ही हैं। लड़के को पेड़े दिये कि पारवती जी खुश होकर उसके लोभ में प्रश्न न करेगीं। परन्तु पारवती कब मानने वाली थीं। आखिर शिवजी शङ्का समाधान करने 'देख पारवती! उद्यमी मनुष्य जब काम करने लग जाता है वह दो हाथों से इतना काम करता है कि उसके चार हाथ लगे प्रतीत लगते हैं जैसे हाथी अपनी सूँड़ से सारा काम काज करता है। सूँड़ का मतलव केवल यही है कि मनुष्य सर्व अंग से काम में लग जाय कि कुछ सुधबुध न रहे, परन्तु उसका मन चूहे के समान चंचल होता है, जब तक हाथी जैसे आकार वाले महान् साधनों द्वारा उस पर सवारी न सीख ले, यह दाव में आने वाला नहीं और देख जब कर्मिष्टि कर्म लगता है उसके सारे शरीर में खून दौड़ता रहता है जिससे वह लाल रंग का प्रतीत होने लगता है। पेड़े देने का मतलव केवल यही है कि उद्यमी मनुष्य मोटा ताजा होता है और अधिक खाता है और उसको पचा लेता है। किसानों का जीवन देखो वह कैसे उत्साही और उदार चित्त होते हैं। यह बात नगर निवासियों में नहीं होती।

चूहा जो अपना व्याख्यान सुना रहा था बोला—'जब देवताओं को गणेश जी जैसे भारी भड़कम शरीर वाले की सवारी के लिए कोई युक्ति न सूझी तो 'तबेले की बला बन्दर के सर' मेरी ओर दृष्टि की। वह विद्वान थे कि हाथी का बोझ अगर उठा सकता है तो यह चूहा ही उठावेगा और बात भी

सच्ची है। गणेशजी समस्त देवताओं के शिरोमणि हैं। सब मनुष्य हर काम के पहले 'श्री गणेशाय नमः' कहकर तब उसे शुरू करते हैं और मैं कौन हूं ? 'चूहा !' सब पशुओं, पक्षियों का मुझे शिरोमणि समझो। गणेशजी देखने में भारी डील डौल के हैं और उनकी अपेक्षा मैं उतना ही छोटा हूँ। परन्तु सूक्ष्म दृष्टि में मैं बड़ों से बड़ा और मोटों से भी मोटा हूँ तब ही तो हिन्दुस्तानी अपने मुटापे रूप की उपेक्षता का चूहे से प्रमाण देते रहते हैं। यह लोग भी बड़े स्याने हैं यदि स्याने न होते तो ऐसा उदाहरण क्यों देते ? मैं अपनी बड़ाई आप क्या करूँ, छोटा मुँह बड़ी बात समझी जायगी। परन्तु सज्जनो! यथार्थ तो यह है कि मैं सारी प्रकृति की जान हूँ। उसका गुप्त रहस्य और एक अमोल पदार्थ प्रदान हूँ। अपने मुँह मियाँ मिट्ठू नहीं बनता। सत्य कहता हूं, सत्य ही सुनता हूं, सच्चा चोर और सच्चा लुटेरा हूँ :—

गज मेरा सूफियों से पूछलो। ज्ञानियों से मेरी निस्वत कुछ सुनो ॥
जौहरे कुदरत हूँ और सिरें खुदा। मुझ में सब की इब्तदा और इन्तहा ॥
मैं न होता फिर कोई होता नहीं। जागता कोई, और कोई सोता नहीं ॥
सिरै अकबर समझो मुझको बेगुमाँ। मेरा सानी हर दो आलम में कहाँ ॥

मैं अपनी बड़ाई तो कर चुका फिर भी हद से बाहर नहीं गया। यदि तुम मुझसे फिर पूछो कि 'क्यों ?' तब फिर अपना असली भेद सुनाऊं बिना 'क्यों' कहे हुए आगे न बढ़ूँगा।

चूहा बुद्धिमान था। उसका व्याख्यान रोचक था। कैलाश के तमाम भूत बेताल, डॉकिनी, साँकिनी एक स्वर में बोल उठे 'क्यों ?' और इस क्यों' की गूँज सारे आकाश मण्डल में गूँज गई और चूहे ने फिर कहना शुरू किया— 'सज्जनो !

सवाल करता है जो वह जवाब पाता है।
जो दिल का नेक है आखिर सबाब पाता है ॥
गुनाह से बचो और फैले बद से तोबा करो।
नहीं जो सुनता मेरी वह अज़ाब पाता है ॥

मैं क्या हूँ ? कौन हूँ ? कैसा हूँ, कहाँ हूँ ? मुझे अपनी ख़बर है। तुमको

तुमको मेरा ज्ञान नहीं, क्यों नहीं ? क्योंकि तुम चाहे देवता और योगी ही परन्तु तुमको अपना ज्ञान नहीं है, मेरी क्या खबर होगी ?'

पढ़ के लिख के खो गये, और ज़ात को जाना नहीं ।
वह नहीं आलिम है अपने को, जो पहचाना नहीं ॥
पढ़ के पत्थर बन गये, लिख २ के गारा ईंट हो ।
क्या खुदा को मानोगे, जब अपने को माना नहीं ॥
इल्म बे इल्मी हुई, और अक्ल बे अक्ली हुई ।
खाली अज इल्म खुद, नादान हो दाना नहीं ॥

मैं क्या हूं ? तुम क्या समझते हो ! तुम कहोगे मैं गणेश जी का चूहा हूं, यह ठीक है । गणेश जी क्या है ? और गणेश जी का वाहन चूहा क्या है ? यह तुम नहीं जानते । मुझे चूहा कह कर और चूहा समझकर अपना पीछा छुड़ाते हो ।'

'गणेश कहते हैं गुणों के ईश को ।' गुण नाम है 'इन्द्रियों' का और ईश कहते हैं स्वामी मालिक, ईश्वर, खुदा का, जो इन्द्रियों का स्वामी है, जिसके आधार पर समस्त इन्द्रियाँ हैं वह गणेश है । इन्द्रियाँ देवता कहलाती हैं ।

गणेश जी देवताओं के स्वामी हैं । यह तुम कुछ २ समझ गये । समस्त स्थूल का व्यवहार जिसके आधार पर हो वह गणेश कहलाता है । वह इसी दृष्टि से सबके शिरोमणि माने जाते हैं और सब 'श्री गणेशाय नमः' कह कर काम को हाथ लगाते हैं, समझते खाक भी नहीं ।

अक्ल पर पत्थर पड़े हैं, अक्ल रुखसत हो गई ।
तुम को छुट्टी मिल गई है, और फुरसत मिल गई ॥
जाहिरी बातों में आके, बे खबर वातिन से हो ।
हाय ! यह ज़ाहिर परस्ती, दिल की ज़हमत हो गई ॥

गणेश जी का रहस्य इस समय इतना ही देना आवश्यक है क्योंकि विस्तार भय है । जब कभी और पूछोगे तब देखा जायगा और मैं क्या हूं ? चूहा ! जिस पर यह गणेश सवारी करते हैं और जिस पर सब शरीर, इन्द्रियां बुद्धि और मन का भार लदा हुआ है । मैं गणेश जी का

कहलाता हूं जिसका अर्थ सवारी करना है और संस्कृत में घोड़े को कहते हैं। मैं हाथी के रूप वाले गणेश जी का घोड़ा हूँ, चंचल हूं जल्दी जल्दी कभी ठुमक चाल से चलने वाला ! कभी बे लगाम और बे रकाब के चलने वाला !

जमीं पर हूँ कभी आस्माँ पर हूँ कभी।
कभी हूँ कौन में, और मकाँ पर हूं कभी ।।
इधर फुदक के गया और उधर को जा उछला।
कभी हूँ नाम के सर पर कभी निशाँ पर हूँ कभी ।।
हवा से तेज ज्यादा हूं वर्क से तेज है शोखी।
कभी हूं लाले गोहर तो काँ पर हूं कभी।

मैं सबको अपनी पीठ पर लादे हुए फिरता हूं। मैं न होता तो न जमीं होती न आसमाँ होता, न शिव होते, न पारवती, न गणेश।

देखने में तुम समझते हो हक़ीर।
अस्ल में मैं हूं मर्द कबीर ।।

भूत, बेताल आश्चर्य में आकर पूछने लगे—'चूहे जी महाराज ! आप कौन हैं जो ऐसी बढ़ बढ़कर बातें मार रहे हो ?'

चूहे ने कहा, 'तुमने पूछा अच्छा किया, अब मैं तुम्हें आनन्दपूर्वक अपना वृतान्त सुनाऊँगा। मैं गणेश जी का मन हूँ। चंचल, तीव्र, मचला यह मन तुम में भी है। तुम नहीं जानते। विष्णु का मन गरुड़ है, ब्रह्मा का हंस, शिव का नन्दी बैल, पारवती का सिंह, सरस्वती का मोर और लक्ष्मी का कँवल। इस मन में सहस्त्रों नाम और रूप है। तुम समझते होगे तुम पाँवों के बल चलते, हाथों से पकड़ते छूते, जवान से बोलते, नाक से सूँघते, बुद्धि से सोचते और शरीर से काम करते हो, यह असत्य है। सबका भार अपने ऊपर उठाने वाला, सबका काम करने वाला, सबको काम में लगाने वाला, यह तुम्हारा मन ही है।

वही आँख में है वही नाक में है।
वही अर्श पर है वही खाक में है ॥
वही रग में हरदम समाया हुआ है।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

॥ मनुष्य बनो ॥

वही जाता है और आया हुआ है ॥
उसी में है ताकत उसी में है कुब्बत ।
उसी में है नफरत उसी में है रगबत ॥
उसी में मोहब्बत उसी में मदारा ।
वही मुन्तफी है वही आशकारा ।
निज़ामे जहाँ का वही मुन्तजिम है ।
जो सच पूछो दिल मुनकसिम महरम है ॥

अब तुम समझ गये कि यह 'मन' क्या है ? यह चूहा है, चंचल है हर समय संकल्प विकल्प उठाने वाला ! बंधन में बँधा और मुक्त हैं और वही दोनों लोक और परलोक का असली तत्व है। यदि वह ऐसा न होता तो गणेश जी के शरीर का बोझ कैसे उठाये फिरता ? मैं गणेश जी की सवारी का चूहा, शिवजी का नन्दी बैल, ब्रह्मा जी का हंस, पारवती का सिंह, विष्णु का गरुड़ और तुम सबका मन हूं, एक भी चर अचर ऐसा नहीं है जिसका जी और जान मैं नहीं हूँ ।

—o—

(पेज नं० ४ का शेष)

धन्यवाद

श्री टी० लक्ष्मण राव बैमल वाड़ा, करीमनगर ने अपने नवासे के जन्म की खुशी में पत्रिका को सहायतार्थ ११) रु० भेजें हैं। मालिक से कामना है। कि वे बच्चे को चिर आयु प्रदान करे। एवं सभी को सुखी व सम्पन्न बनाये रक्खे ।

व्यवस्थापक/प्रकाशक

प्रवचन

परम सन्त परमदयाल पं० फकीरचन्दजी महाराज

मानवता मन्दिर होशियारपुर

क्रियात्मिक जीवन

साधारणतया जो आदमी सुख, आनन्द और शान्ति के इच्छुक हैं और इसके लिए अपने २ विश्वास के अनुसार साधन भी करते हैं और अन्तर के अभ्यास से उनको रोशनियों, शब्द और अन्य योग के दृश्य भी नजर आते हैं उनको भी चाहे वे साधु हों, गृहस्थी हों, गुरू हों या चेले हों या किसी भी लाइन पर चलने वाले क्यों न हों। जिन्दगी के अनुभव में क्रोध चिन्ता, विद्रोह और अशान्ति पैदा होती रहती है। लोग जब किसी महापुरुष की जीवनी लिखते हैं तो अपने विश्वास व श्रद्धा के अनुसार या भाववश भिन्न-२ प्रकार की ऐसी बातें लिख देते हैं जो उनकी महानता को बढ़ाते हुए लोगों के ध्यान को किसी विशेष विचार की तरफ खींचते हैं। परिणाम यह निकलता है निकलता है कि इन्सान जो अभी क्रियात्मिक नहीं है, उसका विश्वास कुछ दिनों या वर्षों बाद भंग हो जाता है। मैंने अपनी सारी जिन्दगी में इस बात की खोज की कि मेरी रहनी इस तरह की हो जाये कि मुझे किसी समय भी बबराहट या बेचैनी न हो। मग तजुर्बा जिन्दगी में यह सिद्ध हुआ कि जाग्रत अवस्था में या स्वप्न अवस्था में यह असम्भव है कि इन्सान अपनी जिन्दगी के हालात मैंने बहुत सुने व देखे और साथ ही अपनी जिन्दगी की निरख परख मेरे सामने है। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि कोई मेरे सामने है। मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि कोई इन्सान शारीरिक वह मानसिक अवस्था में रहता हुआ शान्ति को कायम नहीं रख सकता। मेरा सम्बन्ध राधास्वामी मत या सन्त मत से है अथवा सन्तों की राय। उन्होंने अपने अनुभव के बाद यह कहा कि जिन्दगी की दो अवस्थाएँ हैं। एक काल और एक अकाल। काल की

और एक अकाल। काल की अवस्था में जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्था है। या जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति एक शारीरिक और एक मानसिक। इन अवस्थाओं में रहता हुआ व्यक्ति चाहे कोई भी हो दुःख सुख, खुशी, गमी, चिन्ता, अचिन्ता, से कभी मुक्त नहीं रह सकता।

आज एक सतसंगी रामप्रकाश नामी सतसंग के विचार से मेरे पास आये उनके आने का कारण प्रगट रूप में उनको मालूम हो या न हो मगर मुझे मालूम है। अभ्यास में काफी उन्नति कर जाने के बाद भी उनको जीवन के व्यवहार में अशान्ति आती रहती है। यह क्यों है? इसलिए कि जिस अवस्था को हमने बनाया हुआ है वह अवस्था काल की है और उस हालत में सिवाय गुरू के और कोई रक्षक नहीं है। जिसके ऊपर सतगुरू का हाथ है, वह ऐसी अवस्था में गुरू के याद करने पर जल्दी सहायता करता है।

गुरु धरा शीश पर हाथ क्यों सोच करे।
गुरु रक्षा हरदम साथ उनसे काल डरे॥

ऐसी स्थिति में सिवाय गुरु के और कोई रक्षक नहीं। जिसका अनुभव रामप्रकाश को स्वयं हुआ। रामप्रकाश ने मालूम किया कि इतनी गर्मी में यात्रा करने पर भी 'ध्यान योग' की शक्ति से उसने अपने इस कष्ट को महसूस नहीं किया जिससे वह भयभीत था। वह इसकी रक्षा करने वाला फकीरचन्द नहीं था जो इस समय बोल रहा है। बल्कि वह सतगुरू था जो इसके अन्तर में है। गुरू या मालिक वास्तव में इन्सान के अन्दर हैं। उसके कई रूप हैं। जो व्यक्ति के अपने ही अन्तर हैं। एक ध्यान का रूप, एक विचार का रूप, सार समझ का रूप, एक शब्द का रूप, एक सुमिरन का रूप। जैसा–२ रूप किसी व्यक्ति को प्यारा है उस ही रूप में जो उसका ध्यान करता है उसकी रक्षा तुरन्त होती है। गुरू नाम है इष्ट का आदर्श का और वह आदर्श इन्सान की इस काल देश में हर समय रक्षा करता रहता है।

प्रिय ओमप्रकाश तुम मुझे गुरु मानते हो मैं तुम्हें गुरु का रूप बता रहा हूं। क्योंकि मैं सत्य प्रिय व्यक्ति हूं। इस विचार से मैं एक सतपुरुष के रूप में तुम्हें तुम्हारे अन्तर गुरु और चेले के सारतत्व को समझा रहा हूं। जीवित

पूर्ण पुरुष का सतसंग आवश्यक है। मैं यह शब्द अभिमान से नहीं कह रहा हूँ बल्कि सत्य कह रहा हूं। बल्कि मैंने सत्यता को बहुत भली प्रकार से अनुभव किया है। क्योंकि मैं स्वयं दुखी रहा करता था अतएव अपने जैसे दुखियों की अशान्ति को महसूस करते हुए मैंने सतसंग का सिलसिला चालू किया है। मुझे खुशी है कि आप सत्यता के निकटतम किनारे पर पहुँच रहे हो। मेरी शुभ भावना है कि तुम सचाई को समझकर जब तक जीवन है इस काल चक्र में रहते हुए काल चक्र के प्रभावों को सच्चे सतगुरु दातादयाल परम तत्व जो तुमसे अलग नहीं उसकी शरण और प्रेम से प्रभावों से मुक्त रहो। जिसको गुरु तत्व की समझ आ जाती है उसके लिऐ इस जीवन के बाद कोई जीवन नहीं रहता। क्योंकि अज्ञान दूर हो जाता है। बिश्लेषण करने के ढंग का नाम अज्ञान को दूर करना है। परन्तु याद रखो संसारिक जीवन में अज्ञान सुखदायी होता है परन्तु विशलेषण अथवा ज्ञान प्राप्त करने के बाद अज्ञानी बनकर रहो अन्यथा तुम्हारा सांसारिक जीवन खराब हो जायेगा। बच्चा ! तुम समझदार हो, विवेकी हो मैं तुमको तल्वा कहा करता हूं। दातादयाल जी का बचन सुनो :—

जान बूझ अज्ञान बन न ज्ञान पाय अज्ञान।
बल पोरष से रहित हो, तब सच्चा बलवान ।।

मैंने दातादयाल की बातों को समझना चाहा। जीवन बहुत संघर्ष से गुजरा। दुनियाँ में अज्ञानी बनकर रहो अन्यथा सांसारिक जीवन नीरस हो जायगा। कोई आनन्द नहीं मिलेगा। विशलेषण को अनुभव के पर्दे में न रखोगे तो शारीरिक और मानसिक जगत के व्यवहार में कष्ट होगा। यह शुभ राय तुम्हारे लिए पर्याप्त है। जब कभी बाहरी प्रभाव की बजह से उदासीनता आया करे तो मेरी इस राय को याद कर लिया करना। तुम्हारी रक्षा होगी। मैं धोखा नहीं देता कि मैं होशियारपुर में बैठा हुआ तुम्हारी सहायता कर सकता हूं। बल्कि मेरे वचन जो कि असली और सच्चा गुरू है यह तुम्हारी सहायता करेगा।

गुरु रूप न समझे कोई, भरम में पड़े अज्ञानी।

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

गुरू को मानस जानकर भक्ति का करें व्यवहार, सो प्राणी अ... मूढ़ हैं।

कैसे जावें भव पार।
देह के बने अभिमानी।

गुरू को मानस जानकर सीस प्रसादी लें।
सो तो पशु समान हैं संशय में अटके ।।
गुरु तत्व न जानी।
मोह की फाँस फँसानी ।।

गुरु को मानस जानकर भेड़ की चलते चाल,
वह बन्धन को क्यों तजै व्यापै माया काल।
पड़े योनी की खानी।

गुरु नाम आदर्श का, गुरु है मन का इष्ट,
इष्ट आदर्श को न लखे समझो इसे कनिष्ट।
बात बूझे मनमानी।

गुरू भाव घट में रहे, अघट सुघट की खान,
जिसे समझो ऐसी नहीं, वह है मूढ़ महान।
नहीं गुरु रूप पहचानी।

चेला तो चित में रहे, गुरु चित के आकाश।
अपने में दोनों लखे, वही गुरू का दास ।।
रहे गुरू घट-२ ठानी।

सुरत शिष्य गुरु शब्द है, शब्द गुरू का रूप।
शब्द गुरू की परख बिन, डूबे भरम के कूप ।।
नर जन्म गवानी।

—*—

सीता की उत्पत्ति

दूसरे दिन जनक विश्वामित्र से मिलने आया। ऋषि घर के भीतर थे, राम और लक्ष्मण बाहर खेल रहे थे। जनक को देखा, आये और नमस्कार किया। जनक ने ऋषि के दर्शन की इच्छा प्रकट की। राम ठहर गये। गुरू की आज्ञा पाकर मिथिला नरेश को उनके समीप ले गये। ऋषि ने दोनों भाइयों को अपने पास बिठाकर राजा से पूछा आपका आगमन इस समय किस लिये हुआ! जनक ने उत्तर दिया 'कल सीता का स्वयंवर है मैंने प्रतिज्ञा की है कि जो मनुष्य शिवजी के धनुष को तोड़ेगा? मैं अपनी प्यारी बेटी सीता उसे ब्याह दूँगा देश-देश के राजे महाराजे, सेठ, साहूकार, ब्राह्मण और शूद्र, चांडाल. यवन आर्य और वसु सब आये हैं। कल सबके बल और पराक्रम की परीक्षा है। आप भी इन राजकुमारों के साथ धनुष यज्ञ के मंडप में पधारिये और उसकी शोभा बढ़ाइये।

विश्वामित्र—'जनक! तुम विदेह और परम ज्ञानी और ऋषियों मुनियों के गुरू हो। सब तुम्हारे दर्शन करने आये हैं। मैं इसी स्वयंवर देखने को आया हूं। और इन राजकुमारों को भी साथ लाया हूं। मैं समय पर अवश्य आऊँगा। लेकिन यह तो बताओ तुमने धनुष तोड़ने की भीष्म प्रतिज्ञा क्यों की? इसका कोई न कोई कारण होगा।'

जनक 'मैं आपको आद्योपान्त यह कहानी सुना देता हूं। एक समय देश में अकाल पड़ा खेती झुलस गई। प्रजा भूख से मरने लगी, नदी नालों का पानी सूख गया, मुझसे कहा गया कि राजा हल जोते तो पानी बरसे, मैंने अपनी प्रजा की प्रार्थना स्वीकार कर ली। हल में बैल और खेत जोतने गया, खेत जौता गया। उस खेत की पृथ्वी में एक हाड़ी गढ़ी हुई थी। जब उसे हल की ठेस लगी, हाँडी फूट गई और उस हाँडी के भीतर एक रोती बिलखती लड़की निकली।

उसे देख मेरे मन में करुणा आई। मैंने उस बच्ची को गोद में उठा लिया उसी समय आकाश मंडल में काली २ घटाएँ उठीं और रिमझिम-रिमझिम

पानी बरसने लगा। मैं उस लड़की को गोद में लिये हुए भीगता हुआ महल में आया, कपड़े बदले लड़की को रानी की गोद में देकर कहा कि यह मेरी लड़की है। वह हल की लकीर में मिली थी मैंने उसका नाम सीता रखा। सीता संस्कृत में हल की लकीर को कहते हैं। मैं उसके प्रेम के बन्धन में बँधा हूँ, लड़की बहुत प्यारी है। मीठी २ बातें करते है इसने अपने प्रेम के बंधन में मुझे जकड़ रखा है। संस्कृत 'सी (बाँधना-जकड़ना) इस दृष्टि से भी मैंने उसका नाम सीता रखा। सीता नाम रखने के दो कारण हैं।'

विश्वामित्र 'क्या आप जानते हैं कि यह किसकी लड़की है ? और किस निर्दई ने उसे हाँडी में बन्द करके पृथ्वी में गाड़ दिया था ?'

आप राजा हैं जाँच तो अवश्य ही की होगी।

जनक—न मैंने यह बात किसी पर प्रकट की न यह भेद किसी को बताया, मैं यह जानता भी नहीं और न जानना चाहता हूँ। मेरे हल चलाने से यह उत्पन्न हुई, इसलिये यह मेरी अपनी बेटी है और लोग इसे इसी कारण से जानकी भी कहते हैं। जनक से उत्पन्न हुई लड़की जानकी कहलाती है, यह मेरी बेटी का दूसरा नाम है।'

विश्वामित्र हँसे—'क्यों न हो तब ही तो तुम विदेह कहलाते हो, विदेह कहलाने के कारण का आज मुझे पता मिला।

जान बूझ जड़ हो रहे, तजै जगत की आस।
गति विदेह उसको मिलै, ऋद्धि सिद्धि सब पास।
जानकार जो नर बना वह क्या जाने भेद।
जान बूझ अनजान जो, उसके हाथ में वेद।
हाँ और नहीं के मध्य में, यह रहस्य भरपूर।
अज्ञानी कुछ निकट है, नर ज्ञानी है दूर।

जनक अपनी बारी पर मुस्कराये, राम लक्ष्मण को पता नहीं लगा कि दोनों के हँसने का कारण क्या है ? फिर भी चुप चाप बैठे रहे क्योंकि मुँह खोलना असभ्यता समझा जाता है।

विश्वामित्र ने फिर पूछा, 'यह तो मैं समझ गया। अब यह बताइये कि

आपने शिव के धनुष तोड़ने की प्रतिज्ञा क्यों की ?' जनक, 'ऐ सर्वज्ञ और त्रिकाल दर्शक ऋषि ! मेरे वंश में कई पीढ़ियों से शिव का धनुष रखा हुआ है। वह बहुत भारी और कठोर है। जब से एक स्थान में रखा हुआ है। तबसे वहाँ ही पड़ा है। किसी को साहस नहीं हुआ कि उसका स्थान बदले।'

एक दिन मैंने सीता से कहा 'बेटी बहुत दिनों से किसी ने न धनुष के घर में झाड़ू बुहारू किया, न किसी ने लीप पोत की। तू उस जगह को शुद्ध कर दे, सीता उठी स्वाभाविक रीति से धनुष को उठाया और फिर लीप पोत कर के अपने स्थान पर रखा। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। मैंने सीता में असाधारण बल देखकर प्रतिज्ञा की जब वह धनुष को उठा सकती है तो इसके पुरुष को अधिकतर बलवान होना चाहिए मेरे प्रतिज्ञा करने का यह कारण है।'

ऋषि और जनक दोनों हँसे, राम ने उन्हें हँसते और मुस्कराते हुए देख कर जाना कि इस प्रसंग में कोई न कोई रहस्य है, लेकिन फिर भी चुप रहे बोलना या प्रश्न करना उचित नहीं था। राजा जनक चला गया। राम मन ही में बिचारते और समय के ताक में लगे रहे।

जब रात को ऋषि सोने लगे, दोनों भाई पाँव दबाने आये, प्रश्न का अच्छा समय मिल गया।

राम ने पूछा— मैं अपनी ढिठाई की क्षमा माँगते हुए आप से प्रश्न करता हूं कि सीता की उत्पत्ति का रहस्य क्या है ?

विश्वामित्र–'तुम यह प्रश्न क्यों करते हो !'

राम–आप दोनों मुस्करा रहे थे, मैंने समझा कि इस मुस्कराने में कोई न कोई भेद अवश्य है।'

विश्वामित्र—'सुनो राम ! तुम अधिकारी और ब्रह्म के अवतार हो तुम ऐसे प्रश्न कर सकते हो साधारण मनुष्य का यह कर्तव्य नहीं है, मैं एक बार गंगा की उत्पत्ति के प्रसंग में यह रहस्य तुमको बता चुका हूं और दीक्षित और शिक्षित भी कर चुका हूं अब इस पर कुछ विशेष प्रकाश डालने का यत्न करता हूं।

जब गंगा सुमेरू पर्वत पर गिरी उसकी धार ने पूरब पश्चिम या दाँये

बाँये को पृथक कर दिया और वह पृथ्वी पर गिरी और वहाँ केन्द्र बनाकर ठहर गई। इस केन्द्र का नाम मूलाधार है। जनक मन है जो जनता है या उत्पन्न करता है, उसे जनक कहते हैं, और उत्पन्न होने को भी संस्कृत में जनक कहते हैं जब इस मन की शक्ति क्षीण होने लगती है तो इसे हल जोतने या सोचने बिचारने की आवश्यकता होती है, इससे दाँये बाँये या पूरब पश्चिम की पृथक करने वाली लकीर प्रकट हो जाती है इसी का नाम सीता है, यह देवी है, शक्ति है और सुषुम्ना नाड़ी है। यह मूलाधार पर कुण्डलाकार होकर जमी हुई बैठ जाती है। उस समय उसी का नाम कुण्डलनी शक्ति हो जाता है।

साधन करने से यह जागकर, मूलाधार से उठ कर, चार विचले चक्करों को बेधती हुई आँजना चक्र (तीसरे तिल) पर सर्पाकार होकर खड़ी हो जाती है, आँजना चक्र दोनों भौओं के बीच में है। यही शिव का धनुष है, यह धनुष के आकार का होता है, यह कुण्डलनि या लकीर वाली सीता इसे उठा देती है। यह रहस्य है !'

राम–'यह धनुष कैसे तोड़ा जाता है ?'

विश्वामित्र–राम को यह साधन सिखाकर कहा—'यह धनुष केवल तुम तोड़ सकोगे – दूसरे का पराक्रम नहीं हैं। लेकिन जल्दी न करना चाहिए ?'

राम दीक्षित तो पहले से ही थे। गायत्री के सावित्री रहस्य का साधन करते चले आ रहे थे। अब और भी इस क्रिया योग के विषय पर प्रकाश पड़ गया और मन में बहुत प्रसन्न हुए।

शुभ समाचार

दयाल मानवता प्रचारक सभा (रजि०) राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली

२६ वाँ वार्षिक दशहरा मानवता

सन्त सम्मेलन

स्त्री उपयोगी,
स्वास्थ्य व मनोविज्ञान सम्बन्धी
पुस्तकें तथा 'शाही' और 'मोती'
सिलसिले के उपन्यास तथा
परमदयाल फक़ीरचन्द जी महाराज
कृत उच्च कोटि की अमूल्य पुस्तकें
मिलती हैं।
पूरा सूचीपत्र मंगायें।
डाक खर्च सब का अलग है।
पुस्तकें रजिस्टर्ड डाक या रेल से
भेजी जाती हैं।

मिलने का पता :—
कार्यालय
मनुष्य बनो
शिव भवन, लेखराजनगर,
अलीगढ़ (उ० प्र०)

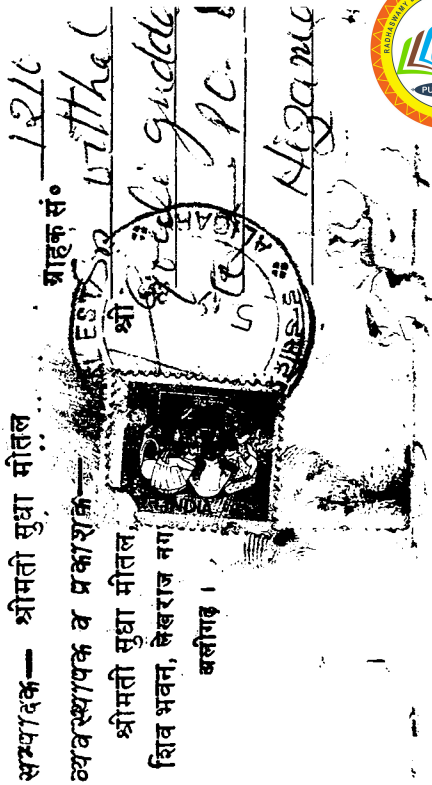

सम्पादक— श्रीमती सुधा मीतल ग्राहक सं० 1216
व्यवस्थापक व प्रकाशक— श्रीमती सुधा मीतल,
शिव भवन, लेखराज नगर,
अलीगढ़।

Printed by S. Mittal, Data Dayal Printers, Aligarh